॥ ओ३म् ॥

वेद प्रकाश

धनुर्वेद और तदन्तर्गत दिव्यास्त्र-विद्या

[श्री पं० भगवद्दत्त रिसर्च स्कालर]

१. **प्रयोजन**—इस समय धनुर्वेद के ग्रन्थ लुप्त-प्राय हैं। इसके ज्ञाता भी अब नहीं हैं। ऐसी अवस्था में प्रधान मन्त्री परलोकगत पं० जवाहर लाल आदि कुछ मान्य लोगों का कथन रहा है कि धनुष-बाण आदि तो पुराने दिनों की बातें थीं। उन दिनों विज्ञान का प्रादुर्भाव नहीं हुआ था। अब विज्ञान का युग है। तदनुकूल युद्ध के जो उपकरण अब प्रयोग में आ रहे हैं, उन के सामने तीर आदिकों से युद्ध का क्या मूल्य है। यह कथन साधार है, वा निराधार, तथा च ज्ञानमूलक है, अथवा अज्ञानमूलक, इस की परीक्षा के लिए यह लेख लिखा गया है।

पुनश्च आर्थर बैरिडेल कीथ ने स्वरचित 'संस्कृत वाङ्मय का इतिहास' (सन् १९३०) में धनुर्वेद का नाम भी नहीं लिखा, इसके वैज्ञानिक महत्त्व पर प्रकाश डालने की तो बात ही क्या रही।[1] यही भाग्य एम० कृष्णमाचारिअर के 'संस्कृत वाङ्मय का इतिहास' (सन् १९३७) का भी है। इस लिए भी इस विषय पर लिखना आवश्यक हो गया है।

२. **उपवेद**—धनुर्वेद उपवेदों में से एक है। ये उपवेद कब उपदिष्ट हुए, इस का ज्ञान आगे होगा। उपवेद पद भारत संहिता से बहुत पुराने भरत मुनि कृत नाट्य शास्त्र में प्रयुक्त हुआ है। यथा—

वेदोपवेदैः संबद्धः ॥ १ । १८ ॥

भरत मुनि के समकालिक अथवा पूर्वकालिक द्रुहिण-पुत्र=द्रौहिणिः का एक वचन राजशेखर ने अपनी काव्य मीमांसा में उद्धृत किया है। उसमें भी उपवेद पद प्रयुक्त हुआ है। यथा—

इतिहासवेदधनुर्वेदौ गान्धर्वायुर्वेदावपि चोपवेदाः।

"वेदोपवेदात्मा सार्ववर्णिकः पञ्चमो गेयवेदः" इति द्रौहिणिः। अ० २।

द्रुहिण अपर नाम है भगवान् ब्रह्मा का।

३. **धनुर्वेद एक उपवेद**—वेदों के चार उपवेद हैं। आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्ववेद और अर्थवेद। इन उपवेदों का नामोल्लेख महाभारत शान्तिपर्व १२२। ३२, विष्णु पुराण ३। ६। २९, कात्यायनकृत चरणव्यूह परिशिष्ट, चतुर्थ खण्ड, तथा कात्यायन कृत प्रतिज्ञा परिशिष्ट आदि में है।

प्रतिज्ञा परिशिष्ट में उपवेदान्तर्गत भूरि-भूरि विद्याओं का समावेश किया गया है।

अपरञ्च, एतद्विषयक जो श्लोक महाभारत

---

१. कीथ के पूर्ववर्ती वैवर ने सन् १९५२ में 'भारतीय वाङ्मय का इतिहास' में मधुसूदन सरस्वती के आधार पर धनुर्वेद और तद्विषयक विश्वामित्र के ग्रन्थ का संकेत किया है। (पृ० २७१)

और विष्णु पुराण में हैं, उन्हें ही प्रपञ्चहृदय के विद्वान् कर्ता ने प्रपञ्चहृदय के वेद प्रकरण में भगवान् मनु के नाम से उद्‌धृत किया है। बहुत संभव है, ये श्लोक बृहन्मनु के पाठ में हों और वहीं से महाभारत आदि में उद्‌धृत चले आ रहे हों।

४. उपवेदों का काल—उपवेद सर्गारम्भ से ही चले आ रहे हैं। धनुर्वेद में उपदिष्ट 'व्यूहों', 'शस्त्र चालन' और 'युद्ध-कौशल' आदि का वर्णन भगवान् ब्रह्मा के शतसहस्र (=एक लाख) अध्याय युक्त त्रिवर्ग शास्त्र में था। अतः इसमें अणुमात्र भी सन्देह नहीं कि धनुर्वेद आदि उपवेद वर्तमान चतुर्युगी के कृतयुग में उपदिष्ट हो चुके थे।

५. उपवेदों से लाभ—उपवेद अधिकांश में व्यावहारिक शिक्षा के ग्रन्थ हैं। लोक-यात्रा की सफलता के लिए इन का अध्ययनाध्यापन अत्यन्त लाभप्रद है। राष्ट्र के निर्माण और रक्षण के लिए ये अपरिहार्य हैं। और धनुर्वेद के पूर्ण ज्ञान और प्रयोग के विना कोई राष्ट्र अपना अस्तित्व ही स्थिर नहीं रख सकता। इसी से त्रयी का मार्ग विस्तृत होता है। उपवेद प्राचीन विज्ञान की पराकाष्ठा के परिचायक हैं। वेद के रहस्यों का इन में पदे-पदे स्पष्टीकरण है।

६. धनुर्वेद के उपदेष्टा तथा आचार्य—भगवान् ब्रह्मा के पश्चात् धनुर्वेद के अनेक उपदेष्टा हुए। उनके उपदेश को क्रिया में सिखाने वाले अनेक आचार्य भी हुए। उनके ज्ञान के लिए निम्नलिखित प्रसङ्ग द्रष्टव्य हैं।

(क) स्वामी दयानन्द सरस्वती ने ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, (संवत् १९३३) के ग्रन्थ प्रामाण्याप्रामाण्य विषय में—

संस्कृत पाठ में—**अङ्गिरः प्रभृतिभिर्निर्मिता धनुर्वेदग्रन्था बहव आसन्निति।**

भाषा पाठ में—**अङ्गिरा भरद्वाजादि कृत संहिता** लिखा है।

पुनश्च—स्वामी दयानन्द सरस्वती ने संस्कारविधि ग्रन्थ (संवत् १९४०) के वेदारम्भ प्रकरण में धनुर्वेदान्तर्गत—

अङ्गिरा आदि ऋषिकृत ग्रन्थ माना है।

(ख) गोदावरी मिश्र (ख्रीष्टीय १६वीं शती) ने हरिहरचतुरङ्ग के धनुर्विद्या परिच्छेद में लिखा है—

शुक्र-गौतम-शाण्डिल्य-जमदग्नि-बृहस्पतीन्।
धनुर्वेदगुरूंश्चाग्र्यान् तर्पयेद् बलिकर्मणा ॥ २५० ॥

अर्थात्—शुक्र आदि धनुर्वेद के गुरुओं का तर्पण करे। यहाँ गौतम से अभिप्राय कुरुओं के आचार्य कृप गौतम के पिता सत्यधृति गौतम[1] से प्रतीत होता है।

(ग) विष्णु पुराण की मध्यमा व्याख्या का कर्ता श्रीधर स्वामी (१३५०-१४५० ख्रीष्ट सन्)[2] लिखता है—

धनुर्वेदो भृगुप्रोक्तः। ३। ६। २९॥

अतः भृगु भी धनुर्वेद का एक प्रवचनकार था।

(घ) प्रपञ्चहृदय (अष्टम शती, विक्रम से पूर्व)[3] में उल्लेख है—

धनुर्वेदो ब्रह्म-प्रजापति-इन्द्र-मनु-जमदग्निसुत-आदिभिः अध्ययनाध्यापनपरम्परानुगतो विश्वामित्रादिभिरनन्तरं शास्त्रत्वमापन्नः।

उपवेद प्रकरण।

पूर्व खण्ड संख्या ४ के अन्तर्गत ब्रह्मा के उपदेश

१. महाभारत आदिपर्व, १४०। २-५॥ सत्यधृति, शरद्वान् का पौत्र, धनुर्वेदान्तगः। विष्णु पु० ४। १९। १६॥ धनुर्वेदस्य पारगः। वायु पु० ९९। २०२॥

२. परशुराम कृ० गोडे, भण्डारकर संस्थान का जर्नल, भाग ३०, अंश ३-४।

३. देखो मद्रचित, निरुक्त भाष्य, भूमिका, पृ० ३३।

का वर्णन हो चुका है। प्रजापति से अभिप्राय, किस प्रजापति से है, यह अन्वेष्टव्य है।

(ङ) वसुदेवहिण्डी नामक प्राकृत जैन ग्रन्थ (ईसवी सन् की लगभग पाँचवीं शताब्दी)[1] के 'पउमालंभन' में धनुर्वेद की उत्पत्ति बताई है गई।'[2]

(च) महाभारत, शान्तिपर्व, अ० २१२ में भगवान् व्यास (विक्रम से ३००० वर्ष पूर्व) का कथन है—

गान्धर्वं नारदो वेद भरद्वाजो धनुर्ग्रहम्। ३३।

अर्थात्—भरद्वाज धनुर्वेद का ज्ञाता था।

(छ) महाभारत, आदि पर्व, अ० १४० के श्लोक हैं—

अध्यगीष्ट स वेदांश्च वेदाङ्गानि च सर्वशः ॥३९॥
अग्नेरस्त्रमुपादाय यद् ऋषिर्वेद काश्यपः।
अध्यगच्छद् भरद्वाजः तदस्त्रं देवकार्यतः ॥४०॥
अग्निवेश्यं महाभागं भरद्वाजः प्रतापवान्।
प्रत्यपादयद् आग्नेयमस्त्रमस्त्रविदांवरः ॥४१॥
कनिष्ठजातं स मुनिर्भ्राता भ्रातरमन्तिके।
अग्निवेश्यस्तथा द्रोणं तदा भरतसत्तम।
भारद्वाजं तदाग्नेयं महास्त्रं प्रत्यपादयत् ॥४२॥

अर्थात्—काश्यप से भरद्वाज ने आग्नेय अस्त्र सीखा, भरद्वाज से अग्निवेश्य ने, और अग्निवेश्य से द्रोण ने वही अस्त्र सीखा।

एवं काश्यप, भरद्वाज, अग्निवेश्य और द्रोण धनुर्वेदगत आग्नेयास्त्र के आचार्य हुए।

(ज) महाभारत, सभा पर्व, अ० ५४ में सान्दीपिनि गुरु से कृष्ण और बलराम ने ५० दिन में सम्पूर्ण धनुर्वेद की शिक्षा प्राप्त की। यथा—

तावुभौ जगमतुर्वीरौ गुरुं सान्दीपिनिं पुनः ॥४॥
धनुर्वेदचिकीर्षार्थं धर्मज्ञौ धर्मचारिणौ।
पञ्चाशद्भिरहोरात्रैः दशाङ्गं सुप्रतिष्ठितम् ॥६॥
सरहस्यं धनुर्वेदं सकलं तावबापतुः।

धनुर्वेद के दश अङ्ग भी जानने योग्य हैं।

(झ) वाल्मीकि मुनि ने रामायण के बालकाण्ड में वसिष्ठ और विश्वामित्र के संग्राम के वर्णन में विश्वामित्र द्वारा महादेव के प्रसादार्थ तपस्या के फल के वर्णन में कहा है—

एवमुक्तस्तु देवेन विश्वामित्रो महातपाः ॥१६॥
प्रणिपत्य महादेवमिदं वचनमब्रवीत्।
यदि तुष्टोऽसि मे देव धनुर्वेदः प्रदीयताम् ॥१७॥
साङ्गोपाङ्गः सोपनिषत् सरहस्यस्तथैव च।

पश्चिमोत्तर शाखा, अ० ५०।

अतः महादेव=शिव भी धनुर्वेद के आचार्य थे।

रामायण पश्चिमोत्तर शाखा का यह पाठ, दाक्षिणात्य शाखा, अ० ५५ में लगभग इसी रूप में उपलब्ध होता है।

७. धनुर्वेद सूत्र—धनुर्वेद सूत्रों का उल्लेख महाभारत, सभापर्व ५। ११० में पाया जाता है। मार्कण्डेय पुराण ६३। २३-२७ में अस्त्रग्रामहृदय विद्या का नाम स्मरण किया गया है।

इस से आगे धनुर्वेद के ग्रन्थों का वर्णन किया जाता है।

१. औशनस धनुर्वेद

उशना का वंश—काव्य उपनाम उशना अथवा शुक्र का वंश भारतीय इतिहास में सुप्रसिद्ध है।

शुक्र पुत्र था महर्षि भृगु का।

काल—आचार्य शुक्र पारसीक धर्म पुस्तक अवेस्ता में **कवि-उसा** नाम से स्मरण किया गया है। वह देवयुग और त्रेता के आरम्भ में जीवित था।

पूर्व संख्या ६ ग में भृगु को धनुर्वेद का प्रवचनकार कहा गया है। अतः इस एक कुल में भृगु,

....

१. प्राकृत साहित्य का इतिहास, जगदीश चन्द्र जैन, पृ० ३८१।
२. तत्रैव, पृ० ३९०।

उशना, जमदग्नि और परशुराम सब धनुर्वेदाचार्य थे।

उद्धरण—उशना का मूल ग्रन्थ अभी अनुपलब्ध है। पर इसके उद्धरण निम्नलिखित ग्रन्थों में मिलते हैं—

(क) वीरमित्रोदय, लक्षण प्रकाश, पृ० २९३-३१८ पर, खड्ग आदि शस्त्रों के लक्षण-परक अनेक लम्बे उद्धरण इस ग्रन्थ से लिये गये हैं।

(ख) माधव यज्व मिश्र की नयचन्द्रिका नाम्नी कौटिलीय टीका में कुन्त शस्त्र का लक्षण कहते हुए, **उक्तं हि**—लिख कर एक श्लोक उद्धृत किया गया है। वह श्लोक औशनस धनुर्वेद के कुन्त-विषयक पाठ के आधार पर लिखा गया प्रतीत होता है। यह भी सम्भव है कि विविध धनुर्वेदों में कुन्त-विषयक वैसा ही लेख हो।

(ग) वराहमिहिर ने बृहत्संहिता ४९। २३ से खड्ग-लक्षण अध्याय में लिखा है—

इदमौशनसं च शस्त्रपानं
रुधिरेण श्रियमिच्छतः प्रदीप्ताम्।

स्पष्ट है कि वराहमिहिर उशना के ग्रन्थ का पान-योग उद्धृत कर रहा है।

यह श्लोक वराहमिहिर ने योगयात्रा १२।२३ में भी लिखा है।[1]

ग्रन्थ-स्वरूप—यह धनुर्वेद गद्य-पद्य-मय था। इस में जमदग्नि और शुक्र का संवाद है। यथा—

जमदग्निं प्रति शुक्रो भगवानुवाच। पृ. २९३।
जमदग्निं प्रति भगवानुशना प्रोवाच। पृ. ३१२।

ग्रन्थान्तर्गत श्लोकों में—

जमदग्ने, भार्गवेन्द्र, वत्स आदि सम्बोधन पद प्रयुक्त हैं। भार्गवेन्द्र आदि पद जमदग्नि के नाम के द्योतक हैं।

विष्णुधर्मोत्तर में ऐसे पद—विष्णु धर्मोत्तर (भारत युद्ध से १०० वर्ष पश्चात्) में धनुर्वेद-विषयक एक प्रकरण है। उस में पुष्कर किसी को उपदेश देते हुए निम्नलिखित सम्बोधन पदों का प्रयोग करता है। यथा—

महाभाग,[2] भार्गव,[2] भृगूत्तम,[2] भृगुनन्दन[3]।

अतः यह निश्चित है कि पुष्कर ने भी जमदग्नि अथवा जामदग्न्य राम को धनुर्वेद उपदेश दिया था।

२. त्रैयम्बक धनुर्वेद=ईश्वरोक्त=शिवोक्त

आर्य वाङ्मय में त्रैयम्बक एक प्रसिद्ध अस्त्र-वेत्ता था। लङ्का के युद्ध में एक दिन अकेले राम ने दिन के आठवें भाग में, अर्थात् लगभग १॥ घण्टे में राक्षसी सेना के २,४२,००० सैनिक मार दिये। यह घटना गान्धर्वास्त्र के संमोहन से घटी। तब देव गन्धर्व आदि सब साधु, साधु कहकर राम की पूजा कर रहे थे। तब प्रसन्न सुग्रीव, विभीषण, हनूमान्, जाम्बवान् आदि से धर्मात्मा राम बोला—

एतदस्त्रबलं दिव्यं मम वा त्र्यम्बकस्य वा ॥३८॥
दा० रा० युद्ध काण्ड, ९४ सर्ग।

अर्थात्—यह दिव्य अस्त्रबल मेरा है, अथवा त्र्यम्बक=शिव का है।

शिव से ही अर्जुन ने पाशुपतास्त्र सीखा था। अतः इस में सन्देह नहीं कि शिव ने भी किसी धनुर्वेद का प्रवचन किया था।

वंश—रुद्र, शिव विशालाक्ष अथवा त्र्यम्बक का वंश भारतीय इतिहास में विख्यात है।

काल—शिव का काल देवयुग से आरम्भ होकर सुचिर तक चला जाता है।

---

१. यही श्लोक वीरमित्रोदय, लक्षण प्रकाश, पृ० ३०४ पर भी उद्धृत है।
२. वीर मित्रोदय, लक्षण प्रकाश, पृ० २७५, २८१. २९५, २९८ पर उद्धृत।
३. तत्रैव, पृ० २७६।

उद्धरण—इस धनुर्वेद का परिचय निम्न-लिखित स्थानों से प्राप्त होता है—

(क) वीरमित्रोदय, लक्षण प्रकाश, पृ० २७६ से इस त्रैयम्बक धनुर्वेद के उद्धरण आरम्भ होते हैं। इनसे प्रतीत होता है कि ईश्वर अथवा शिव **वत्स** अथवा **पुत्रक** सम्बोधन से कुमार को उपदेश करता है।

देवासुर संग्रामों में देव-सेनानी कुमार उपनाम स्कन्ध था।

(ख) शारङ्गधर-विरचित चिन्तामणि में लिखा है:—

एते शिवधनुर्वेदस्य भगवतो व्यासस्य।

(ग) भण्डारकर, अनुसन्धान संस्थान के शिव-धनुर्वेद के हस्तलेख, संख्या ४०७, संग्रह १८८७-९१ में लिखा है—

ईश्वरोक्तात् धनुर्वेदात् व्यासेनापि सुभाषितात्।[1]
पद्यान्याख्याय रचितो ग्रन्थः संक्षेपतो मया॥

इससे ज्ञात होता है कि ईश्वरोक्त धनुर्वेद तथा व्यासोक्त धनुर्वेद से इस शिव धनुर्वेद का संक्षेप रचा गया। यह संक्षेप सम्भवतः त्रैयम्बक धनुर्वेद का है।

ग्रन्थस्वरूप—यह मूलग्रन्थ शिव और कुमार के संवाद रूप में था।

ईशान संहिता

गोदावरी मिश्र कृत हरिहरचतुरङ्गम् के धनुर्विद्या परिच्छेद के आरम्भ के दो श्लोक आगे उद्धृत किये जाते हैं—

धनुर्वेदं समालोच्य तथैवेशान संहिताम्।
वीरचिन्तामणिं वीक्ष्य श्री कोदण्डचतुर्भुजम्॥२॥
सारसंग्रहमालोच्य धनुः शास्त्रान्तराणि च।
वक्ष्यतेऽत्र धनुर्विद्या सारभूतार्थ सञ्चयः॥३॥

अर्थात्—धनुर्वेद, ईशान संहिता, वीरचिन्तामणि, श्रीकोदण्डचतुर्भुज और सारसंग्रह आदि ग्रन्थों को देखकर यह सञ्चय कहा जाता है।

टिप्पण—गोदावरीमिश्र 'धनुर्वेद', इतना ही लिखता है। उसने इसके प्रवचनकर्ता का नाम नहीं लिखा। तत्पश्चात् वह **ईशान संहिता** का नाम लिखता है। ईशान नाम भी शिव का है। अतः धनुर्वेद-परक ईशान संहिता शिवप्रोक्त थी। वह ईश्वरोक्त धनुर्वेद से भिन्न थी वा नहीं, यह निर्णययोग्य वात है।

सदाशिव—वासिष्ठ धनुर्वेद के आरम्भ में लिखा है—

यां सरहस्यां धनुर्विद्यां भगवान् सदाशिवः परशुरामायोवाच।

अतः स्पष्ट है कि शिव ने समय-समय पर कभी कुमार को और कभी परशुराम को धनुर्वेद का उपदेश किया।

वासिष्ठ धनुर्वेद में आगे भी वसिष्ठ कहता है—

विश्वामित्र शृणुष्वाथ धनुर्द्रव्यं त्रयं क्रमात्।
लोहं शृङ्गं च काष्ठं च गदितं शम्भुना पुरा॥

अर्थात्—जो पहले शम्भु=शिव ने उपदेश किया था, उसे हे विश्वामित्र! सुनो।

नैपाल में सदाशिव के ग्रन्थ का हस्तलेख—नैपाल दरबार के हस्तलिखित ग्रन्थों के सूचीपत्र, पृ० १९०, संख्या ५५७ में धनुर्वेद का एक ग्रन्थ सन्निविष्ट है। उसके अन्त में लिखा है—

इति श्री सदाशिवप्रोक्तो धनुर्वेदः समाप्तः।

३. भरद्वाजकृत धनुर्वेद

वंश—आदि ऋषि अङ्गिरा थे। उन का पुत्र बृहस्पति था। बृहस्पति का पुत्र भरद्वाज था।

काल—दीर्घजीवीतम ऋषि भरद्वाज त्रेता के आरम्भ से भारत युद्ध से ३०० वर्ष पूर्व तक जीवित रहा।

धनुर्वेद—पूर्व संख्या ६ के च भाग में शान्ति-पर्व के प्रमाण से भरद्वाज के धनुर्वेद का लेख हो चुका है। ६ क में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने भी

१. देखो, परलोकगत परशुराम क० गोड़े का धनुर्वेद पर लिखा—
Bulletin, Deccan College, Research Institute, Poona; August 1947, p. 35.

भरद्वाज के धनुर्वेद का अस्तित्व माना है। मधुसूदन सरस्वती ने प्रस्थान भेद में भरद्वाज के धनुर्वेद का उल्लेख किया है। विष्णु पुराण टीकाकार विद्वान् श्रीधर स्वामी ने भरद्वाज के धनुर्वेद का नाम स्मरण किया है।

अग्निवेश्य और द्रोण—दीर्घजीवी भरद्वाज का एक शिष्य अग्निवेश्य था। वह आग्नेयास्त्र का विशेष ज्ञाता था। महाभारत आदि पर्व, अ० १४० के ३९-४२ श्लोकों के अनुसार भरद्वाज ने उसे यह अस्त्र सिखाया था। अग्निवेश्य ने वही अस्त्र भरद्वाज के पुत्र आचार्य द्रोण को सिखाया।

४. जमदग्निकृत धनुर्वेद

वंश आदि—जमदग्नि के कुल और कालादि का परिचय पूर्व ७।१ के अन्तर्गत कराया गया है।

उद्धरण—आयुर्वेद की सुश्रुत संहिता का टीकाकार डल्हण चिकित्सा स्थान, अ० १२ की टीका में लिखता है—

रथचर्यां पदातिचर्यां च जमदग्निराह सर्व-दिग्भाग भागेषु हस्त्यश्वरथपत्तिषु। शस्त्रास्त्रैर्यस्तु संयोगः सा चर्येति प्रकीर्त्यते ॥इति॥ ११॥

इससे जाना जाता है कि जमदग्नि का धनुर्वेद-परक ग्रन्थ अवश्य था।

५. वासिष्ठ धनुर्वेद

इस ग्रन्थ के आरम्भ में लिखा है—

अथैकदा विजिगीषुर्विश्वामित्रो राजर्षिर्गुरुं,
वसिष्ठमभ्युपेत्य प्रणम्योवाच।
ब्रूहि भगवन् धनुर्विद्यां दृढचेतसे,
शिष्याय दुष्टशत्रुविनाशाय च।
तमुवाच महर्षिर्ब्रह्मर्षिप्रवरो वसिष्ठः।
शृणु भो राजन् विश्वामित्र।
यां सरहस्यां धनुर्विद्यां भगवान् सदाशिवः
परशुरामायोवाच तामेव सरहस्यां वच्मि ते हिताय।
गोब्राह्मण साधुवेदरक्षणाय च।
यजुर्वेदाथर्वसम्मितां संहिताम्।[1]

अर्थात्—सदाशिव के पुरातन उपदेश का यह धनुर्वेद अनुशासन मात्र है।

यह ग्रन्थ मुद्रित हो चुका है, पर उसकी प्रति इस समय मेरे पास नहीं है।

६ विश्वामित्रकृत धनुर्वेद

(क) पूर्व ६ घ के अन्तर्गत प्रपञ्च-हृदय के प्रमाण से यह निश्चित होता है कि परम्परा से प्राप्त धनुर्वेद विश्वामित्र द्वारा शास्त्रत्व को प्राप्त हुआ।

(ख) विश्वामित्र ने कृशाश्व प्रजापति से अस्त्र विद्या प्राप्त की। कृशाश्व प्रदत्त अस्त्रों का वर्णन वाल्मीकीय रामायण, बालकाण्ड, अ० १९ में है—

ते हि पुत्राः कृशाश्वस्य प्रजापतिसुतोपमाः ॥१६॥
पश्चिमोत्तर पाठ

अर्थात्—कृशाश्व के अस्त्र मानो उसके पुत्र थे।

कृशाश्वतनया ह्येते जंभकाः कामरूपिणः।
पश्चिमोत्तर वा० रा० बाल० २६। १०॥

(ग) विश्वामित्र ने शिव से धनुर्विद्या प्राप्त की। इस का वर्णन पूर्व ६ झ में हो चुका है।

विश्वामित्र के आविष्कार

न्यून से न्यून दो दिव्यास्त्र विश्वामित्र के अपने आविष्कार हैं। उनके विषय में वह स्वयं कहता है।

शङ्करास्त्रं च दीप्तास्यं गृहाणेदं मयोदितम्।८।
शुष्कार्द्रे चाशनी राम गृहाणेमे मयोदिते ॥१०॥
पश्चिमोत्तर पाठ, वा० रा० बाल० अ० २५।

इन दोनों श्लोकार्धों में 'मेरे द्वारा उदित' पद स्पष्ट करते हैं कि ये दोनों अस्त्र विश्वामित्र की आत्मीय खोज का परिणाम थे। शङ्करास्त्र विश्वामित्र ने अपने गुरु शिव=शङ्कर के नाम से प्रसिद्ध किया। शुष्क और आर्द्र दोनों अशनियाँ पृथक्-

१. श्री महेन्द्रकुमार रचित पौरस्त्य धनुर्वेद में उद्धृत पृ० १७, १८।

पृथक् काम करती थीं, अथवा एक साथ ही, यह भविष्य की खोज बताएगी।

वाल्मीकि का साक्ष्य—रामायण में वसिष्ठ दशरथ से विश्वामित्र के विषय में कहता है—

तानि चास्त्राणि वेत्त्येष यथावत् कुशिकात्मजः।
अपूर्वाणां च जनने शक्तो भूयस्य धर्मवित् ॥१८॥

अर्थात्—नए-नए अस्त्रों के उत्पन्न करने में यह विश्वामित्र शक्त है।

प्रस्थान भेद—विश्वामित्र के धनुर्वेद का वर्णन मधुसूदन सरस्वती ने प्रस्थान भेद में किया है।

७. व्यासकृत धनुर्वेद

पूर्व ७-२ के ख, ग भागों में यह लिखा गया है कि शिव=ईश्वरोक्त धनुर्वेद और व्यासोक्त धनुर्वेद कभी विद्यमान थे। परशुराम क० गोड़े के पूर्व बताये गये लेख में इस विषय का संकेत है।

८. द्रोणकृत वीरचिन्तामणि धनुर्वेद

वंश आदि—आचार्य द्रोण का वंश और काल सुप्रसिद्ध है।

वीरचिन्तामणि के हस्तलेख—वीरचिन्तामणि के पाँच हस्तलेख पूना के भण्डारकर अनुसन्धान संस्थान में सुरक्षित हैं। गोड़े ने अपने लेख में इस बात की सूचना दी है। उन में से हस्तलेख संख्या १३८, संग्रह १८९२-९५ में उसका नाम है—

वीरचिन्तामणि धनुर्वेदः।

इस हस्तलेख के अन्त में पाठ है—

इति श्री द्रोणभाषित-वीरचिन्तामणि-धनुर्वेदः समाप्तः।

अतः वीरचिन्तामणि का कर्ता द्रोण था, ऐसा ज्ञात होता है। इस बात की पुष्टि के लिए अधिक प्रमाण अन्वेष्टव्य हैं।

मध्य प्रदेश और बरार के सूचीपत्र—इस सूचीपत्र के पृ० २१६ पर धनुर्वेद चिन्तामणि नाम का ग्रन्थ सन्निविष्ट है। सम्भवतः वह प्रस्तुत ग्रन्थ ही है।

वीर चिन्तामणि से प्रमाण—जिन ग्रन्थकारों ने इस ग्रन्थ से प्रमाण उद्धृत किए हैं, उनकी सूची निम्नलिखित है। यथा—

१. वीरमित्रोदय, लक्षण प्रकाश पृ० २७९ से आरम्भ कर के आगे-आगे इस ग्रन्थ के प्रमाण उद्धृत किए गए हैं। यथा—

वीरचिन्तामणौ धनुवदे।

पृ० २७९, २८१, २८२, २८३।

धनुर्वेदे वीरचिन्तामणौ।

पृ० २८०, २८२। इत्यादि।

२. गोदावरी मिश्र ने वीरचिन्तामणि का उल्लेख किया है। देखो पूर्व ७।२ अन्तर्गत ईशान संहिता का वर्णन।

द्रोण की कृति का एक अन्य प्रमाण—गोदावरी मिश्र हरिहरचतुरंग के धनुर्विद्या परिच्छेद में लिखता है—

द्रोणाचार्यमते नूनं नास्त्यशक्यं महीतले ॥३७२॥

यहाँ **द्रोणाचार्यमते** पद द्रष्टव्य है।

वासिष्ठ धनुर्वेद और वीरचिन्तामणि—इन दोनों ग्रन्थों के अनेक श्लोक बहुधा सर्वथा एक समान हैं। यथा—**प्रथमं यौगिकं चापं**...आदि दो श्लोक, वीरमित्र, पृ० २७९।

तथा पौरस्त्य धनुर्वेद में उद्धृत वासिष्ठ धनुर्वेद पृ० ४०।

पर स्मरण रहे कि वा० धनुर्वेद के कई श्लोक त्रैयम्बक धनुर्वेद के श्लोकों से भी साम्यता दिखाते हैं। यथा—चतुर्विंश...। वीर० पृ० २७७; पौरस्त्य पृ० ४० पर वा० ध०, श्लोक ३५ आदि।

९. वैशम्पायनकृत नीतिप्रकाशिका

प्रकाशित—इस पुस्तक का प्रथम संस्करण सन् १८८२ में गुस्टव आपर्ट द्वारा किया गया था। वर्तमान में उपलब्ध संस्करण सन् १९५३ में मद्रास सरकार द्वारा प्रकाशित हुआ।

काल—इस ग्रन्थ का रचयिता व्यास शिष्य वैशम्पायन के अतिरिक्त दूसरा नहीं है। वह

अर्जुन के प्रपौत्र, और परीक्षित के पुत्र जनमेजय को इस का उपदेश देता है। अतः नीतिप्रकाशिका भारत-युद्ध के लगभग ७० वर्ष पश्चात् रची गई।

इसमें प्रमाण—१. नीति प्रकाशिका के षष्ठ सर्ग श्लोक ८९, ९५ तथा सप्तम सर्ग श्लोक ३३, ३४ आदि में वर्व मुद्रा का वर्णन है। वह मुद्रा अति पुराने काल में व्यवहृत होती थी।

२. लभन्ति, ३ । ४० ।। प्रतीघातम्, ५ । ४७ आदि प्रयोग प्राचीन काल के हैं। इस ग्रन्थ में निम्नलिखित पाठ है—

यन्त्राणि लोहसीसानां गुलिकाक्षेपकाणि च ।
तथा चोपलयन्त्राणि कृत्रिमाण्यपराणि च ।।५२।।
कूटयुद्धसहायानि भविष्यन्ति कलौ नृप ।५४।
.........भविष्यन्ति अधमे युगे ।।५८।।

अर्थात्—तोप, बन्दूक आदि गोली, गोला फेंकने वाले यन्त्र कलि में अथवा अधम युग में होंगे।

वैशम्पायन कलि के आरम्भ होने के समय यह कह रहा है। अतः यह ग्रन्थ विक्रम से लगभग २९०० वर्ष पहले का है।

विक्रमार्क चरित्र—विक्रमार्क चरित्र नाम के अनेक ग्रन्थ हैं। उनमें से किसी एक का प्रमाण नीति-प्रकाशिका के टीकाकार सीताराम ने अपनी तत्त्वविवृति के आरम्भ में दिया है। यथा—

श्रुत्वा वैशम्पायनमुखाद् धृष्टो जनमेजयस्तदा ।
अष्टाध्यायवतीं नीतिं प्रावर्तयत तां तदा ।।इति।।

इससे ज्ञात होता है कि अष्टाध्याय रूपिणी नीतिप्रकाशिका किसी विक्रमार्क चरित्र से पूर्व का ग्रन्थ है। विभिन्न विक्रमार्क चरित्रों से इस बात का अन्वेषण आवश्यक है।

मनुस्मृति आदि ग्रन्थों के पाठ—नीतिप्रकाशिका में मनुस्मृति, महाभारत आदि के अनेक श्लोक, विना ऐसा लिखे, दोहराए गए हैं। वे ग्रन्थ बहुत प्राचीन काल के हैं।

१०. महाराजाधिराज विक्रमादित्य कृत

धनुर्वेद प्रकरणम्

इस पुस्तक का हस्तलेख नैपाल दरबार की सूची, पृ० १९१, संख्या २।८२ के अनुसार वहाँ विद्यमान है। उसका आरम्भ निम्नलिखित प्रकार से है—

नमो देवाधिदेवाय शङ्कराय कपर्दिने ।
रामाय जामदग्न्याय नमोऽस्त्वमिततेजसे ।।
प्रणम्य परया भक्त्या देवदेवं पिनाकिनम् ।
धनुर्विधानं वक्ष्यामि वीरेश्वरमतोद्धृतम् ।।

अर्थात्—शङ्कर और जामदग्न्य राम को नमस्कार कर के इस धनुर्वेद विद्या को कहा जाएगा। यह ग्रन्थ वीरेश्वर के मत से उद्धृत किया गया है।

अध्याय आदि की समाप्ति पर लिखा है—

इति श्रीमन् महाराजाधिराज वीरविक्रमादित्य संगृहीते श्री वीरेश्वरीय धनुर्वेद प्रकरणो नाम चतुर्थः पादः समाप्तः। श्लोक ४८६।

दूसरा प्रकरण है—

वीरेश्वर मतोत्पत्तिः ।

संग्रह—वीरेश्वर कौन था, यह अभी अज्ञात है। इतना स्पष्ट है कि यह ग्रन्थ संग्रहमात्र है।

विक्रमादित्य शङ्करभक्त—इस धनुर्वेद का कर्ता विक्रमादित्य कोई शिव उपासक था। वह अपने ग्रन्थ के आरम्भ में शिव की स्तुति करता है। संस्कृत विद्या में नाटकों के अध्येता जानते हैं कि शूद्रक-विक्रम अपने मृच्छकटिक प्रकरण के नान्दी-श्लोक द्वारा शम्भु की स्तुति करता है। इसके साथ यह भी सुविदित है कि गुप्तकुल का चन्द्रगुप्त-विक्रमादित्य विष्णु का उपासक था। विक्रमादित्य अन्य भी हुए हैं, पर अधिक सम्भावना यही है कि शूद्रक-विक्रम ही इस धनुर्वेद का रचयिता था।

इस में अन्य प्रमाण—महाराज समुद्रगुप्त-विक्रमादित्य ने एक ग्रन्थ कृष्ण-चरित लिखा था।

उसके आरम्भ में कवियों की स्तुति गाई गई है। वहाँ लिखा है—

पुरन्दरबलो विप्रः शूद्रकः शास्त्रशस्त्रवित्।
धनुर्वेदं चौरशास्त्रं रूपके द्वे तथाकरोत् ॥ ६ ॥

अर्थात्—शूद्रक[1] विक्रम ने धनुर्वेद शास्त्र रचा था। इस कारण हमारा पूर्व-लिखित अनुमान सत्य के समीप ही है।

११. अन्य धनुर्वेद ग्रन्थ

(क) अन्य ग्रन्थों में **राजविजय** ग्रन्थ भी धनुर्वेद-विषय पर हो सकता है। इसे वीरमित्रोदय के लक्षण प्रकाश में बहुधा उद्धृत किया गया है।[2]

(ख) **कोदण्ड चतुर्भुज**—इसे गोदावरी मिश्र हरिहरचतुरङ्गम्, पृ० १४४ पर उद्धृत करता है।

(ग) **कोदण्डमण्डन** ख और ग ये दोनों एक ग्रन्थ हैं, वा दो यह अभी निर्णय करना है।

(घ) **सारसंग्रह**—यह ग्रन्थ (ख) निर्दिष्ट ग्रन्थ के साथ उद्धृत है।

(ङ) धनुर्वेद—इस नाम से एक लम्बा प्रकरण वीरमित्रोदय, लक्षण प्रकाश, पृ० २८४-२९२ पर, **अथ धनुर्वेदः** से **इति धनुर्वेदः समाप्तः** तक उद्धृत है। उसके आरम्भ में ४ श्लोक स्वल्प पाठान्तर के साथ जैनाचार्य हेमचन्द्र कृत अभिधान चिन्तामणि, मर्त्य-काण्ड, श्लोक ४४० पूर्वार्द्ध की स्वोपज्ञ टीका में उद्धृत हैं।

(च) **वात्स्य**—इस नाम के मुनि का कोई धनुर्वेद विषयक ग्रन्थ अवश्य था। इसके प्रमाण भोजराज कृत युक्ति कल्पतरु में मिलते हैं।

अस्त्र विद्या

धनुर्वेद में अस्त्र विद्या का बड़ा महत्त्व है। पर धनुर्वेद के उपलब्ध ग्रन्थों में इस विद्या का वर्णन नहीं मिलता। हमने रामायण, महाभारत और पुराणों से इस विद्या पर प्रकाश डालने वाले कुछ प्रसङ्ग एकत्र किए हैं। उनका उल्लेख आगे किया जाता है।

प्रत्येक अस्त्र, एक पदार्थ-विशेष—प्रत्येक अस्त्र की सामग्री पृथक् थी, ऐसा ज्ञात होता है। उस सामग्री में एक वस्तु रहती थी, अथवा उसमें अनेक वस्तुओं का योग था, यह स्पष्ट नहीं है। अस्त्र के स्वतन्त्र अस्तित्व को समझने के लिए निम्न-उद्धृत प्रमाण सहायक हैं—

१. **पवनास्त्रं ततो रामः प्रगृह्यास्त्रविशारदः।१२।**
पश्चिमोत्तर रामायण, बालकाण्ड, सर्ग २८।

२. **प्रगृह्यास्त्रमथो दिव्यमाग्नेयं रघुनन्दनः।१८।**
प० रा०, बाल, सर्ग २८।

३. **शेषान् वायव्यमादाय निजघान महायशाः।२३।**
दा० रा०, बाल, सर्ग ३०।

४. **अन्यानपि च वायव्यमस्त्रमादाय राघवः।१९।**
प० रा०, बाल सर्ग २८।

५. **वायव्यमादाय ततो वरास्त्रं रामः प्रचिक्षेप निशाचराय।१६८।**
दा० रा०, युद्धकाण्ड, सर्ग ६७।

६. **ततः प्रज्ञास्त्रमादाय मोहनास्त्रं व्यशातयत्।४९।**
महा० भीष्म पर्व, अ० ७३।

७. **रावणोऽपि महातेजाः कपि-लाघव-विस्मितः।**
अस्त्रम् आहारयामास दीप्तमाग्नेयमद्भुतम्।८२।
दा० राम० युद्धकाण्ड, सर्ग ५९।

८. **अथाददे वारुणमन्यदस्त्रं ।२७।**
भीष्म पर्व, अ० ८१।

इन आठ प्रमाणों में—अस्त्रं प्रगृह्य, अस्त्रम् आदाय, अस्त्रम् आहारयामास, आददे अस्त्रम्,

---

१. शूद्रक विषयक इतिहास जानने के लिए देखो, भारतवर्ष का बृहद् इतिहास, भाग दूसरा, पृ० २९१-३०५।
२. पृ० २६४, २९२।

इति । प्रयोग ध्यान देने योग्य हैं । इनका अर्थ है—

अस्त्र को लेकर । अर्थात् अस्त्र कोई वस्तु विशेष है, उसका अपना अस्तित्व है, उसे लेकर ।

अस्त्र शर संयोग—पूर्वलिखित निष्कर्ष इस बात से भी प्रमाणित होता है कि अस्त्र का मोक्ष बहुधा शर-संयोग के द्वारा किया जाता था । तदर्थ अगले प्रमाण द्रष्टव्य हैं :—

१. ब्राह्मेणास्त्रेण संयोज्य ब्रह्मदण्डनिभं शरम् ।
संयोज्य धनुषि श्रेष्ठे विचकर्ष महाबलः ॥५॥

दा० रा० युद्धकाण्ड, सर्ग २२ ।

२. आग्नेयेनाथ संयुक्तं गृहीत्वा रावणः शरम् ।८५।

३. तथापि त्वां मया मुक्तः सायकोऽस्त्र प्रयोजितः ।
।८८।

४. संधाय बाणमस्त्रेण चमूपतिमताडयत् ।८९।

५. सोऽस्त्रयुक्तेन बाणेन नीलो वक्षसि ताडितः ।९०।

दा० रा०, युद्धकाण्ड, सर्ग ५९ ।

जग्राह च शरं तीक्ष्णमस्त्रेणापि च संदधे ॥८४॥
आग्नेयेन तदास्त्रेण योजयामास सायकम् ॥८५॥
अतिकायोऽपि तेजस्वी सौरमस्त्रं समादधे ।
तेन बाणं भुजङ्गाभं हेमपुङ्खमयोजयत् ॥८६॥
उत्ससर्ज तदा बाणं दीप्तं सूर्यास्त्र योजितम् ॥८८॥

६. समाददे बाणमोघवेगं तद् ब्राह्ममस्त्रं सहसा नियोज्य । तस्मिन् महास्त्रे तु नियुज्यमाने सौमित्रिणा बाणवरे शिताग्रे ॥

दा० रा० युद्धकाण्ड, ७१।१०४-१०५ ॥

७. संधाय च शरं दीप्तमभिमंत्र्य महायशाः ।
पर्जन्यास्त्रेण संयोज्य सर्वलोकस्य पश्यतः ॥
अविध्यत् पृथिवीं पार्थः ॥२२॥

महा० भीष्मपर्व, ११६ ।

रामायण और महाभारत के इन छः प्रमाणों में स्पष्ट कहा गया है कि शर, सायक अथवा बाण और अस्त्र का संयोग अथवा संधान किया जाता था ।

उत्तर-काल का वर्णन प्रकार—ब्रह्माण्ड पुराण में अस्त्र-मोक्ष का यह प्रकार यद्यपि इतने स्पष्ट रूप से नहीं कहा गया, तथापि अगले श्लोकार्ध में मान भी लिया गया है । यथा—

८. नारायणास्त्रं विशिखे संदधे चानिवारितम् ।२७।

मध्यम भाग, उपोद्घात पाद, अ० ३९ ।

अर्थात् नारायणास्त्र का विशिख=बाण से संधान किया गया ।

संधान अथवा संयोग प्रकार—एतद्विषयक किसी स्पष्ट वर्णन की अनुपलब्धि के कारण इस विषय का अनुमानमात्र किया जा सकता है ।

१. संधान का अर्थ है, अति समीप जोड़ना । संयोग का भी अर्थ है, समीप कर देना । अतः यह स्पष्ट है कि शर के साथ अस्त्र चिपकाया जाता था । सम्भव है, यह चिपकाना किसी चुम्बकीय शक्ति से हो, अथवा शर ही आकर्षक अयस्कान्त का बना हुआ होता हो । उससे अयो-निर्मित अस्त्र स्वयं जुड़ जाता हो ।

इस सारे प्रकार को अधिक समझने के लिए रामायण, बालकाण्ड का अध-उद्धृत मानवास्त्र के प्रभाव का वर्णन अत्यन्त सहायक है—

दाक्षिणात्य पाठ, सर्ग ३०

इत्युक्त्वा वचनं रामश्चापे संधाय वेगवान् ॥१६॥
मानवं परमोदारमस्त्रं परम भास्वरम् ।
चिक्षेप परम क्रुद्धो मारीचोरसि राघवः ॥१७॥
स तेन परमास्त्रेण मानवेन समाहितः ।
संपूर्णं योजन शतं क्षिप्त सागर संप्लवे ॥१८॥
विचेतनं विघूर्णन्तं शीतेषुबलपीडितम् ।
निरस्तं दृश्य मारीचं रामो लक्ष्मणमब्रवीत् ॥१९॥
पश्य लक्ष्मण शीतेषुं मानवं धर्मसंहितम् ।
मोहयित्वा नयत्येनं न च प्राणैर्व्ययुज्यत ॥२०॥

पश्चिमोत्तर पाठ, सर्ग २८

पवनास्त्रं ततो रामः प्रगृह्यास्त्रविशारदः ।
मारीचोरसि चिक्षेप नातिकोपसमन्वितः ॥१२॥

स तेन परमास्त्रेण पावनेन समाहतः ।
संपूर्णं योजनशतं क्षिप्तो वेगानिलेरितः ॥१३॥

विचेतसं विघूर्णन्तं पवनास्त्रबलेरितम् ।
मारीचं पतितं दृष्ट्वा रामो लक्ष्मणमब्रवीत् ॥१५॥

पश्य लक्ष्मण मारीचं पवनास्त्रसमाहतम् ।
मोहयित्वानयद् दूरं न च प्राणैर्व्ययोजयत् ॥१६॥

इन दोनों पाठों की तुलना से निम्नलिखित परिणाम निकलते हैं—

(क) पवनास्त्र परमास्त्र था ।

(ख) पवनास्त्र ही मानवास्त्र था ।

(ग) पश्चिमोत्तर शाखा के ज, ल, भ, कोशों में दाक्षिणात्य पाठ के १७ का एक अन्य पाठ है—

स मनोः परमोदारमस्त्रं परम दुर्जयम् ।

अतः स्पष्ट है कि मानवास्त्र मनु के आविष्कार का फल था ।

(घ) मानवास्त्र शीतेषु के साथ धर्म संहत था । पवनास्त्र वायव्यास्त्र से भिन्न था । वायव्यास्त्र का प्रयोग राम ने इसके तत्काल पश्चात् मारीच और सुबाहु के शेष अनुचरों के वध के लिए किया था । विश्वामित्र ने ही राम को यह अस्त्र दिया—
शीतेषुमथ मानवम् । बालकाण्ड २७ । १६ ॥
पर शैत्य वायु का ही गुण है । ऐसा महाभारत, शान्तिपर्व और दार्शनिक ग्रन्थों का मत है ।
बाणः शितः—अरण्य ३८ । १६ ॥
इस पवनास्त्र में शैत्य की पराकाष्ठा प्रतीत होती है ।

पश्चिमोत्तर शाखा के ज, ल, भ, कोशों में शैत्येषु पाठ भी है । मानवास्त्र स्वयं शैत्येषु था, अथवा शैत्येषु के साथ संयुक्त था, यह भविष्य के अनुसन्धान का विषय है ।

(ङ) इसी पवन के वेग से मारीच सौ योजन तक चक्कर खाता हुआ, चेतनारहित अवस्था में वायु-मार्ग में धकेला गया ।

(च) मानवास्त्र परमोदार अस्त्र था ।

(छ) परमोदार मानवास्त्र का बल इसी तथ्य से व्यक्त है, कि इस से आहत मारीच सौ योजन दूर जा गिरा ।

(ज) धर्मसंहतम्, (ज, ल, भ, पाठ—धर्मशोभितम् ।)
यहाँ धर्म पद विचारणीय है । क्या इसका अर्थ चुम्बक धर्म से युक्त हो सकता है ।

(झ) दाक्षिणात्य पाठ में **दृश्य** और **व्ययुज्यत,** क्रियाएँ अति प्राचीन व्याकरण शैली का दर्शन कराती हैं । यह ध्यान में रहना चाहिए ।

२. ऐसा भी प्रतीत होता है कि कभी अस्त्र ही शराकार होते थे । वे ही स्वतन्त्र रूप से मुक्त किये जाते थे ।

एतदर्थ निम्न-उद्धृत पाठों पर ध्यान देना चाहिए—

ततः पैतामहं वीरं सोऽस्त्रमस्त्रविदां वरः ।
संदधे सुमहातेजास्तं हरिप्रवरं प्रति ॥
सुन्दरकाण्ड, ४८ । ३६ ॥

अर्थात्—उस पैतामह अस्त्र का संधान किया ।

इस पाठ से ज्ञात होता है कि अस्त्र का स्वतन्त्र संधान भी होता था ।

शराग्र भाग पर अस्त्र-नियोजन—

रामायण का अगला पाठ देखने योग्य है—

तस्मिन् महास्त्रे तु नियुज्यमाने सौमित्रिणा बाणवरे शिताग्रे । दा० रा० युद्धकाण्ड ७१।१०५ ॥

अर्थात्—उस महास्त्र के संयुक्त होने पर, लक्ष्मण द्वारा, तीक्ष्ण अग्र वाले श्रेष्ठ बाण के साथ, अथवा श्रेष्ठ बाण के तीक्ष्ण अग्र भाग पर ।

इन दोनों अर्थों में से कौन सा अर्थ सर्वथा ठीक है, यह धनुर्विद्या-वेत्ता बता सकते हैं ।

अस्त्र-प्रभाव अन्तरिक्ष में—अस्त्रों का प्रभाव अन्तरिक्ष में भी उत्पन्न होता था। वायव्य, आग्नेय और माहेन्द्र अस्त्र अन्तरिक्ष के अणु आदिकों को प्रभावित करके उनमें वैद्युत गतियों का प्रादुर्भाव कर देते थे। इसी लिए अगले पाठ में कहा है—

माहेन्द्रमस्त्रं विधिवत्सुघोरं
प्रादुश्चकाराद्भुतमन्तरिक्षे।
भीष्म पर्व ५५-११० ॥

अर्थात्—माहेन्द्र अस्त्र को अन्तरिक्ष में प्रादुर्भूत कर दिया। अन्यत्र भी **प्रादुश्चकार** क्रिया का प्रयोग हुआ है। कहीं पर अन्तरिक्ष में और कहीं पर सामान्य रूप से भी। यथा—

प्रादुश्चक्रे ऽस्त्रमत्युग्रं भास्करं कुरुनन्दन।
भीष्म पर्व ६७।२३ ॥

एटम-बम्ब-विस्फोट से अधिक तेजोमय—अनेक अस्त्र अत्यधिक तेजोमय थे। उनका वर्णन भी ज्ञानी मानव के चित्त का आकर्षण करता है। यथा—

तदस्त्रं शतसूर्याभं क्षिप्तं रामेण धीमता।
ब्रह्माण्ड पु०, म० भा०, उपो० पा०, ३६।२८ ॥

अर्थात्—वह अस्त्र शत सूर्यों की आभा से युक्त था।

अस्त्र द्वारा अभिमन्त्रण—यह अभिमन्त्रण कैसा था, इसका रहस्य मुझ पर स्पष्ट नहीं हुआ। पर उसके भेद को जानने के लिए अगले दो उदाहरण सहायक होंगे, अतः लिखे जाते हैं—

(क) द्रोण कहता है—

एषा मुष्टिरिषीकाणां मयाऽस्त्रेणाभिमन्त्रिता।
आदिपर्व १४१। २८ ॥

(ख) परशुराम ने—

चिक्षेप नागपाशं च अभिमन्त्र्यशरोत्तमम्।
तदस्त्रं भार्गवेन्द्रेण क्षिप्तं संग्राम—मूर्द्धनि ॥५॥

चकर्त गारुडास्त्रेण सोमदत्तो महाबलः।
ब्रह्माण्ड पु० कार्तवीर्यार्जुन और परशुराम युद्ध।

यहाँ भी नागपाश के साथ उत्तम शर के अभिमन्त्रण का उल्लेख है।

वारि-स्पर्श—कई बार अस्त्र-मोचन के साथ वारि-स्पर्श भी किया जाता था। यथा ब्रह्मास्त्र के मोचन समय परशुराम ने किया।

रामोऽपि वार्युपस्पृश्य ब्राह्मं ब्राह्माय संदधे।
ब्रह्माण्ड पु०, उपोद्घात पा०, अ० ४०।

अर्थात्—परशुराम ने वारि का उप स्पर्शन करके ब्राह्म अस्त्र का संधान किया।

विपाठ जाल—उलटे पाठ की माया का भी वर्णन मिलता है। इस का रहस्य भी अभी अस्पष्ट है। साधारण आदमी तो यही कह देगा कि मन्त्र के उलट पाठ से अभिप्राय है। पर यह इतनी सीधी बात नहीं है। देखिये—

विपाठ जालेन महास्त्रजालं
विनाशयामास…………।
भीष्मपर्व ५६।२६ ॥

अर्थात्—विपाठजाल से महास्त्रजाल का नाश किया।

प्रयोग-निवर्तन-रहस्य—अस्त्र-विद्या में ये तीन पद भी बड़ा महत्त्व रखते हैं। इनके विज्ञान के साथ ही अस्त्र विद्या प्रत्यक्ष होती है। निम्न उद्धृत स्थान इस विषय को स्पष्ट करते हैं—

प्रयोग—अस्त्रों का योग और अयोग भी ज्ञातव्य होता था। अस्त्र कब योग को प्राप्त नहीं होते, यह अस्त्रवित् ध्यान में रखता था। अतः गुरु ही इस विद्या को देता था।

गृहाणेदं महाबाहो विशिष्टमतिदुर्धरम्।
अस्त्रं ब्रह्मशिरो नाम सप्रयोगनिवर्तनम् ॥
आदिपर्व १४३।२३ ॥

निवर्तन-अनिवर्तन—प्रायः अस्त्र निवृत्त हो सकते थे। पर नारायणास्त्र निवृत्त नहीं हो सकता था। अतः कहा है—

नारायणास्त्रं विशिखे संदधे चानिवारितम् ॥२७॥
ब्रह्माण्ड पु०, म० भा०, उपो० पा०, अ० ३६।

अस्त्र रहस्य—वेदों का रहस्य है आरण्यक ग्रन्थों में। मानवधर्म शास्त्र का रहस्य है, उसके अन्तिम अध्याय में। इसी प्रकार अस्त्र विद्या का भी रहस्य था। प्रतीत होता है, अस्त्र-निर्माण की क्रिया इसी में निहित थी। इसके विना सब परिश्रम व्यर्थ था। अतः अस्त्रविद्या का छात्र इस को सीखे विना अधूरा होता था। एतदर्थ द्रोण ने परशुराम से कहा—

अस्त्राणि मे समग्राणि ससंहाराणि भार्गव।
सप्रयोग-रहस्यानि दातुमर्हस्यशेषतः॥
आदिपर्व १४०।६७॥

अर्थात्—हे भार्गव समग्र अस्त्र, रहस्य आदि सहित मुझे प्रदान कीजिये।

ब्राह्मास्त्र-विशेषता—ब्राह्मास्त्र का प्रभाव ब्राह्मास्त्र द्वारा ही नष्ट होता था। एतदर्थ ब्रह्माण्ड पु०, उपो० पा०, अ० ४०। २८, २९ में कार्तवीर्य अर्जुन और परशुराम के युद्ध का प्रकरण, तथा महाभारत, उद्योग पर्व १८४।१५-१७ में भीष्म और पशुराम के युद्ध का वर्णन द्रष्टव्य है। तदनुसार इस अस्त्र के परस्पर जुड़ने पर आश्चर्यकर प्रभाव कहा गया है। वह **ज्वलनार्कवत्** दृश्य था, अथवा **युगान्त** अवस्था दिखाई देती थी। व्योम में तेज मात्र ही प्रादुर्भूत हो गया था। उसके सम्मुख ऐटम बम्ब की क्या सामर्थ्य थी।

अस्त्रबल—भीष्म कहता है, "मैं और अर्जुन क्षण मात्र में संसार को निर्मनुष्य कर सकते हैं" (उद्योग पर्व, १५६।) पुनः भीष्म ही कहता है, **शतसाहस्रघाती**=एक लाख को मार देने वाले अस्त्रों से मैं एक मास में पाण्डव सेना समाप्त कर दूँगा। (उद्योगपर्व १९३।)

पाशुपत अस्त्र—इसका कथन करते हुए अर्जुन महाराज युधिष्ठिर को कहता है—"भगवान् कृष्ण की सहायता युक्त मैं **निमेषमात्र**=आँख की झपक में ही तीनों लोकों को समाप्त कर सकता हूँ। यह वही अस्त्र है, जिस का प्रयोग पशुपति=शिव युगान्त के समय सर्वभूतसंहार के निमित्त करते हैं।" निश्चय ही रौद्री माया के वशीभूत युगान्त समय ऐसी तरंगें और ऐसी रश्मियाँ काम करने लगती हैं कि लोक-संहार हो जाता है।

(उद्योग पर्व, १९३।–)

राम-प्रयुक्त पैतामह अस्त्र—निर्वासित राम दक्षिण को जाते हुए अगस्त्य ऋषि के आश्रम में ठहरे। अगस्त्य ने अत्यन्त आदरपूर्वक उनका आतिथ्य किया। अगस्त्य के पास ब्रह्मास्त्र था। वह इन्द्र ने अगस्त्य को दिया था। और इन्द्र को स्वयं भगवान् ब्रह्मा ने दिया था। ब्रह्मा ही इस **दीप्त शर** का आविष्कारक था। अगस्त्य ने राम के लिए अन्य अस्त्र भी दिये थे, पर इस शर-रूप अस्त्र को सब से प्रथम दिया था। इस अस्त्र की महिमा रामायण के युद्ध काण्ड, सर्ग १११ में वाल्मीकि ने गाई है। तद् द्वारा इस शर का वास्तविक चित्र नेत्रों के सामने आ जाता है। अतः आगे लिखा जाता है—

उसके **वाजों**=पंखों में पवन और **फल**=आगे के नोकीले भाग में **पावक** और **भास्कर** थे। स्मरण रखना चाहिए अन्तरिक्षस्थानी वैद्युत अग्नि को पावक कहते हैं। इस वैद्युत अग्नि के साथ सूर्यस्थित शुचि अग्निः, जिसके कारण सूर्य में **भाः**=चमक है, वह भी था। इस शर का शरीर **आकाशमय**=अन्दर से पोला था। परन्तु इसका **गौरव, मेरु और मन्दर** के सदृश था। मेरु और मन्दर भूमि और अन्तरिक्ष के योग पर अन्तरिक्षस्थ पर्वत हैं। ये आपः के परमाणुओं का सम्मिश्रण हैं। यह शर वपु=शरीर से **जाज्वल्यमान**=तेजोमय था। इसके **पुङ्ख** सुवर्ण से भूषित थे।

इसका निर्माण **तेजसा सर्वभूतानां**=पृथिवी, आपः, अग्निः और वायु के तेज से हुआ था। इसमें भास्कर का **वर्चस**=चमक था। यह गिरियों का भेदन करने में समर्थ था। **नाना रुधिरसिक्ताङ्ग** यह था। ध्यान रहे कि नाना रुधिरों में दिनों-दिन सिक्त करके अर्थात् भिगोकर इसके अंग शक्तिशाली किये गये थे। रुधिरों में भिगोने का एक विज्ञान

है। उसके फलस्वरूप दिव्य शक्ति उत्पन्न होती है। वह शर **मेदोदिग्ध** था। अर्थात् विशिष्ट **मेद** नामक बूटी से **दिग्ध**=विषैला किया गया था। उस में गरुड़ के विविध वाज लगे थे। उस शर का अभिमन्त्रण कर के अर्थात् वारि-स्पर्श आदि क्रिया वाली **वेदोक्त विधि** से राम ने कार्मुक=विशेष धनुष पर संधान किया। उस समय राम **परमायत्त** =अतीव सज्जित था। वह शर रावण की छाती पर गिरा। रावण के हृदय को चीरता हुआ वह ब्रह्मास्त्र—

कृतकर्मा निभृतवत् स्वतूर्णीं पुनरागमत् ॥२०॥

अर्थात्—अपना कर्म समाप्त करके गुह्य रूप से अपनी तूणी में पुनः आ गया।

इस तूणीर में और इस महास्त्र शर में चुम्बकीय शक्ति का भी प्रयोग था। इसके प्रभाव से वह पुनः उसमें लौट आता था।

इस शर का वर्णन कैसा सजीव है! परम विज्ञानवेत्ता भगवान् वाल्मीकि ने इसका जीता-जागता चित्र खींच कर रख दिया है। इसके समझने के लिए भी विज्ञान की बुद्धि की आवश्यकता है। ऐसे अस्त्रों के सामने वर्तमान आयुधों का क्या मूल्य है! निस्संदेह प्राचीन ऋषियों का विज्ञान पराकाष्ठा को पहुँच चुका था।

सारे भूतों का तेज कैसे प्राप्त किया गया, यह प्रकार भविष्य के विद्वान् खोल सकेंगे।

मैंने यहाँ अस्त्र विद्या का अति संक्षिप्त वर्णन किया है। आर्ष ग्रन्थों के सतत अभ्यास से धनुर्वेद की विद्या भी पुनः जीवित हो सकती है।

पूर्व लेखक—धनुर्वेद विषय पर मेरे से पूर्व दो लेखकों ने थोड़ा सा लिखा है। एक थे परलोकगत मेरे मित्र पण्डित जयदेव शर्मा विद्यालङ्कार। उन का "धनुर्वेद" पुस्तक संवत् १९७४ विक्रम में प्रयाग से प्रकाशित हुआ था। वे परिश्रमी और सूझ वाले विद्वान् थे। आर्यसमाज ने उन की योग्यता से लाभ नहीं उठाया।

दूसरे लेखक हैं श्री महेन्द्रकुमार वेदशिरोमणि स्नातक। उनका पुस्तक "पौरस्त्य धनुर्वेद" संवत् १९८८ में छपा था। इन्होंने कुछ सामग्री जयदेव जी के ग्रंथ से ली है। पर ऐसा संकेत मुझे उनके ग्रंथ में मिला नहीं।

अनुसन्धान का स्थान—इस विषय में अनुसन्धान का बहुत अवसर है। सब से पहले धनुर्वेद-विषयक सारे प्राचीन ग्रंथ प्रामाणिक संस्करणों में सुसम्पादित छपने चाहिएँ। तदनु वैदिक-विज्ञान के अध्येता एकत्र होकर इस काम में लगें, तो महान् फल हो सकता है। पर भरपूर धनराशि के विना यह काम सिद्ध न होगा।
